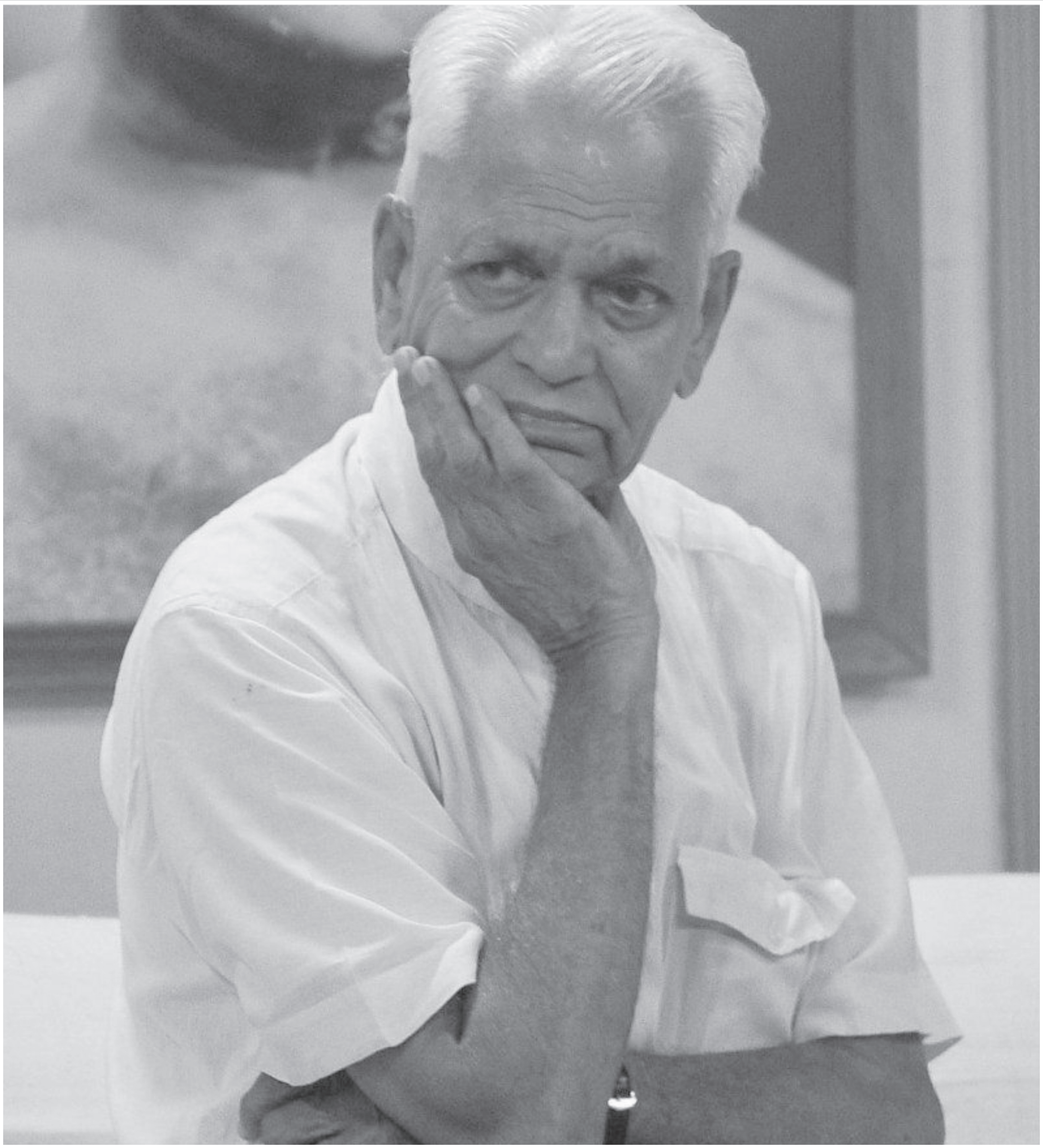
अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका

वर्ष : ४७ अंक : ११ कार्तिक–मार्गशीर्ष वि.सं.– २०७८ नवम्बर २०२१ पृष्ठ –२८ RNI 43602/77 ISSN No.2581-981X



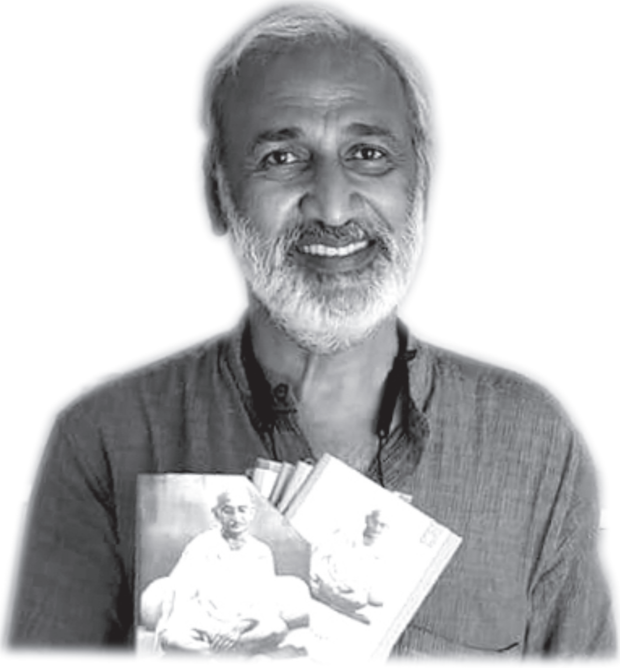
क्षण भंगुर भव राम राम, भाई जी हमारा प्रणाम !

जो सदा हमारी स्मृति में बसे रहेंगे...

श्री सदाशिवराम शर्मा



अभी वर्ष भी नहीं बीता है। महीना नवम्बर का ही था। तारीख 21 नवम्बर, 2020। कौन भूल सकता है कि सदाशिवराम शर्मा नौजवानों में प्राण फूंकने वाला एक अनूठा नौजवान जो अंत तक जवान ही बना रहा, वह जयपुर का निवासी था। हमारा भाई था। राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति का सचिव भी रहा और नेहरू युवा केन्द्र संगठन के उच्चतम पद तक अपनी मेहनत और निष्ठा से पहुंच गया था। जब बहुत लोग कोरोना के शिकार हो रहे थे तब सदाशिवजी बैठ कर अपनी डायरी में लिख रहे थे। हम नहीं हारेंगे, हारेगा कोरोना, कुछ तो करो ना! कुछ तो करो ना! एक अलग तरह का हौसला था, जज्बा था। नौजवानों के साथ मीलों तक साईकिल पर चले जाने का जज्बा किसी भी तूफान में, अकाल में, भू–चाल में, भागकर मदद में जुट जाने का जज्बा। वे नहीं हैं आज, मगर उनके साथ बीते पूरे चालीस बरस कभी भुलाये नहीं जा सकेंगे। बसे रहेंगे वे सदा हमारी यादों में अपने अनन्त प्रेम और सौहार्द के साथ। ❑



भाई अरविन्द ओझा भी इसी महीने में कोरोना के शिकार हुए। बीकानेर के बड़े सरकारी अस्पताल में उनकी चिकित्सा में कोई चूक हुई और वे जयपुर लाये गये। चिकित्सा के दूकानों के नाम बड़े–बड़े हैं, मगर चूक कहां होती है इसे न कोई समझ पाता और न स्वीकार पाता। जयपुर के एक नामी–गरामी अस्पताल में उनको भर्ती करवाया गया। दिन–दिन तबियत बिगड़ती गयी, मगर वे अपनी जीवट से डटे रहने की कोशिश करते रहे। बच्चों को भरोसा दिलाते रहे और हम लोग भी सब आश्वस्त थे कि अरविन्द हारेंगे नहीं, कोरोना को हरा कर हमारे बीच आयेंगे। नियति को कुछ और मंजूर था और 7 नवम्बर, 2020 को वे भी अपनी देह से मुक्ति पा गये। हम कैसे कह सकते हैं कि अरविन्द आज नहीं हैं। कल तो थे, रहेंगे भी हमारे साथ सदा अपनी स्नेहिल यादों और निश्छल एवं मधुर मुस्कान के साथ। ❑

श्री अरविन्द ओझा

हम हैं ताना हम हैं बाना

नाद हमीं, अनुनाद हमीं,
निश्शब्द हमीं, गंभीर।
अंधकार हम, चांद-सूरज हम,
हम कान्हां, हम मीरा।
हमीं अकेले, हमीं दुकेले,
हम चुग्गा, हम दाना.....

हम हैं ताना.........



मिशन ताना–बाना

उदय प्रकाश

समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि।।
समानी व आकूति: समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति।। ऋग्वेद

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की पत्रिका
वर्ष : ४७ अंक : ११ कार्तिक-मार्गशीर्ष वि.सं. २०७८ नवम्बर, २०२१

क्र म

०३ वाणी
नाद हमी, अनुनाद हमीं

०७ आवरण-कथा
आकंठ गांधीवादी भाई जी सुब्बाराव

१३ लेख
एक थे चाचा नेहरू

१७ चिंतन
हम डिजीटल युग में बच्चों की रक्षा कैसे करें ?

२४ एक रिपोर्ट
साक्षरता दिवस विसंगति और विडंबना!

०५ अपनी बात
शिक्षा में राष्ट्र भक्ति

१० लेख
साबरमती के बोलते पत्थर

१४ कविताएं
बाल साहित्य के सितारे

२० चिंतन
संस्कार

२६ पिछला पन्ना
क्या मोबाईल में मौजूद है सारी शिक्षा ?

अपील

समिति के सभी सदस्यों, दूर-दराज के मित्रों एवं भारत के विभिन्न राज्यों में फैले सुधी पाठकों से निवेदन है कि समिति के प्रकाशन की निरंतरता बनाये रखने के लिए अपनी सहयोग राशि पूरी उदारता के साथ भिजवाने का अनुग्रह करें।

आज किसी भी पत्रिका का प्रकाशन बहुत मुश्किल काम है मगर समिति अपने पूर्ण सेवा भाव के साथ अनौपचारिका को पिछले ४७ वर्षों से निरंतर निकाल रही है। सभी प्रबुद्ध पाठक जानते हैं कि अभी हाल ही में कादम्बिनी भी बंद हो गई है जो हिन्दुस्तान टाइम्स का प्रकाशन था। ऐसी स्थिति में हम कटिबद्ध हैं कि अनौपचारिका निरंतर निकलती रहे। आपका सहयोग सादर अपेक्षित है।

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
७-ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र,
जयपुर-३०२००४
फोन : 2700559, 2706709, 2707677
ई-मेल : raeajaipur@gmail.com

सद्भावना सहयोग :
व्यक्तिगत ३५०/- रुपये
संस्थागत वार्षिक
शुल्क ५००/- रुपये
मैत्री समुदाय ३०००/- रुपये

शिक्षा में राष्ट्रभक्ति...

सभी साथियों को दीपावली की ढेर सारी शुभकामनाएं। दीपावली का त्यौहार हमारी जिजीविषा को नयी परिभाषा देता है। एक-दूसरे से मिल, सहकार और आत्मीयता के दीपों का जलना उसे उत्सव बनाता है। यदि हम सारे संसार को ही उसी आत्मीय के साथ अपना बना लें तो सारा जगत ही जगमगा उठेगा।

यह महीना बाल दिवस का भी है। बालकों की उपस्थिति एवं आगमन का उत्सव मनाने का दिन। बालक का आना ही आनंदोत्सव है और हमारे बीच होना भी। बालक हमारे सरताज हैं। हर बालक प्रेम और आनंद के साथ जिए, यह हम सब की जिम्मेदारी है। बालकों को खुला आकाश मिले। वे जो कुछ करना चाहें उसे कर सकें। हर बालक इस पूरे जगत को अपना कह सके और उसे ऐसा अधिकार मिले तो दुनिया का भविष्य बदल जायेगा। क्या शिक्षा इस दिशा में कोई प्रयास कर रही है अथवा कर सकती है ?

सच यह है आज सारे जगत में चल रही शिक्षा ऐसा कोई भरोसा नहीं दिलाती है। हम मन में घनघोर मायूसी को लिये एक बड़ा सवाल पूछते हैं कि शिक्षा राष्ट्रवाद को अपनाये या सारी दुनिया को अपना बनाने की तालीम दे? भोले-भाले बालकों अथवा नौजवानों के दिलों और दिमागों में सरहदें बनाने का काम शिक्षा का काम नहीं है। शिक्षा बालकों को राष्ट्र प्रेम, राष्ट्रभक्ति करना सिखाती है, मगर साथ ही सारे जगत को अपना बनाना सिखाती है ? विचारणीय प्रश्न यह है कि आज के इस डिजिटल युग में बचपन की रक्षा कैसे हो ? बच्चे इंसानियत के कितने नजदीक हैं और कितने दूर ? जीवन में कौन सा आनंद देख कर पुलकित-प्रफुल्लित रहते हैं? हकीकत यह है कि आज बालक अवसाद में जी रहे हैं उन्हें भ्रमित किया जा रहा है। भ्रमित होने के कारण आज बालक विवेक शून्य हो रहे हैं ।

हम सब मिलकर विचार करें कि आज हम बालकों को कैसी शिक्षा दे रहे हैं? बालक क्या होना चाहता है और हम उसे क्या बना रहे हैं? आज हमारा संपूर्ण ध्यान बालकों को अच्छे से अच्छा, ऊंचे से ऊंचा ओहदा दिलाने की ओर है।

चाहे वह शिक्षा हो या उनके जीवन का स्तर, सब कुछ पा लेने के चक्कर में बालकों के हृदय में जन-जन के प्रति प्यार, सम्मान एवं करुणा धीरे-धीरे क्षीण हो रही है। वे शांति का वाद्य बनने की जगह अशांत होते जा रहे हैं। उनके जीवन में प्रकाश की जगह अंधियारा छा रहा है। आशा और विश्वास की जगह संदेह और निराशा अपना घर बनाती जा रही है। धीरे-धीरे यह जहर पूरे समाज में फैलता जा रहा है। इससे समाज का ताना-बाना बिखर गया है, तार-तार हो गया है। आज हमें उस ताने-बाने में होते छेदों को रफू करना है।

हमें विचार करना है कि हमारी शिक्षा हमें सर्व धर्म सद्भावी समाज की संरचना में मददगार होना सिखा रही है या हमें प्रतियोगी, प्रतिद्वंद्वी बनना सिखा रही है।

हमारी सर्व धर्म प्रार्थनाएं चाहे वैदिक प्रार्थना हो बौद्ध हो, मुस्लिम हो या सनातन सिख, ईसाई प्रार्थनाएं, एक ही रास्ता दिखातीं है। वैदिक प्रार्थना हमें असत्य से सत्य की ओर, तमस से ज्योति की ओर , मृत्यु से अमृत की ओर ले जाने की बात कहती है। वहीं बौद्ध प्रार्थना अक्रोध से क्रोध को, साधु से असाधु को और मैत्री से ही वैर को जीतने की बात कहती है। यही सनातन धर्म है। वहीं ईसाई प्रार्थना शांति का वाद्य बनने की बात कहती है।

हमें ऐसा कुटुंब बनाना है जिसमें सभी का मंगल हो, सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों और सब का मंगल देखें। किसी का किसी से वैर न हो। इंसानियत ही हमारा धर्म हो।

शिक्षा में राष्ट्रभक्ति यानी राष्ट्र के प्रति समर्पण की बात कही जाती है। मगर जब हम सिर्फ राष्ट्रभक्ति की बात करते हैं तो निश्चय ही हमारा ध्यान केवल और केवल राष्ट्र के प्रति त्याग, बलिदान और समर्पण भाव से होता है। सच्ची शिक्षा की हम बात करें तो सच्ची शिक्षा तो पूरे जगत को अपना कहने से है, जगत-दृष्टि रखने से है। एक व्यापक विश्व-दृष्टि से है।

विचार करने की बात यह है कि राष्ट्र बड़ा है या जगत। हम राष्ट्र की जय बोलें या जगत की। राष्ट्रभक्ति या राष्ट्रवाद के नाम कब तक हम यूं ही हिंदू, मुस्लिम, सिख-ईसाई करते रहेंगे। आज हम बालकों को देशभक्ति के गीत जरूर सिखाते हैं लेकिन जगत की जय बोलना कब सीखेंगे और सिखायेंगे। सारे विश्व की जय हम तभी बोल सकेंगे, जब जगत के प्रति प्रेम जागेगा। केवल राष्ट्रभक्ति से प्रेम खंडित होगा। खंडित प्रेम हमें स्वयं को भी खंडित ही करेगा और प्रेम से वंचित विश्व में घृणा का ही लेन-देन होगा।



मधुर मधुर मेरे दीपक जल! ❑

– प्रेम गुप्ता

आकंठ गांधीवादी भाईजी सुब्बाराव

❑



सुधेन्दु पटेल

❑

भाई जी श्री एस.एन. सुब्बाराव का जाना नितांत असामयिक है। यह अलग बात है कि लोग उनकी उम्र देख यह कह दें कि यह तो जाने की उम्र ही थी। मगर आज 'भारत माता की तबीयत' ज्यादा खराब है और उनके जैसे 'नौजवान' की देश को जरूरत है। जरूरत है कि कोई कहे 'सब के लिए खुला है मंदिर यह हमारा' कोई आह्वान करें कि 'नौजवान आओ रे...' प्रस्तुत है हमारी सादर श्रद्धांजलि के साथ एक संस्करण। ❑ सं.

शतायु की दहाई पर अपनी सम्पूर्ण चैतन्यता के साथ जागृत रहते हुए अस्पताल से भाईजी का अनंत की ओर आकस्मिक जाना अकाल्पनिक था। एक ही दिन तो हुआ था जब वे मेरी पत्नी आशा से लगभग एक घंटे तक बतकही करते रहे थे । उस दिन वे न केवल अपने पुराने दिनों की अपितु अनेक आत्मीयजनों एवं पारिवारिक सदस्यों के बारे में चर्चा करते रहे थे।

उनके स्वभाव का यह हिस्सा रहा था कि वे पहले पोस्ट कार्ड से, फिर मोबाइल से अपने सुधीजनों की सुध लिया करते थे। मुझे उनकी षष्ठी पूर्ति के अवसर पर बनवासी सेवा आश्रम, गोविंदपुर, मिर्जापुर में राष्ट्रीय स्तर पर नागरिक अभिनन्दन याद आया। इसमे २२ राज्यों की विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के २००० प्रतिनिधियों सहित बाबा आमटे, डॉ. सुशीला नैयर, अनिल बोर्दिया, एन कृष्णास्वामी जैसे विद्वानों, शिक्षा शास्त्रियों ने भाग लिया था तथा उनकी साधनामयी सेवाओं, आजीवन निस्पृह भाव एवं कर्मठता के लिए भारत सरकार की ओर से **सुब्बाराव यूथ डवलपमेंट इंस्टिट्यूट ऑफ़ इंडिया** के निर्माण की घोषणा की गयी थी। जाहिर है यह पहल बोर्दिया जी की ही रही थी।



आज़ादी के बाद गांधीवादियों को समाजवादी नेता डॉ. राममनोहर लोहिया ने तीन श्रेणियों में विभक्त किया था। सरकारी गांधीवादी (नेहरू पंथी), मठी गांधीवादी

(विनोबा पंथी) और कुजात गांधीवादी (लोहिया पंथी) । मैंने सामाजिक परिवर्तन के लिए कुजात गांधीवादियों के कंटीले पथ को चुना था । ज़ाहिर है ऐसे में सरकारी गांधीवादियों से घोर असहमति और मठी गांधीवादियों के प्रति श्रद्धामिश्रित स्थायी चिढ़ दिमाग़ में तारी रहती रही है ।

मठी गांधीवादियों में **विनोबा–जयप्रकाश** से इतर राष्ट्रीय सेवा योजना के ज़रिए सतत युवजनों को सक्रिय रखने वाले एस. एन. सुब्बाराव के रचनात्मक कार्यक्रम आकर्षित तो करते थे लेकिन लोहिया पंथी सिविल नाफ़रमानी, जेल–फावड़ा की रूमानी क्रांतिकारिता का सम्मोहन दिमाग़ पर जुनून की तरह हावी था। ऐसे में सुब्बाराव जी से छठे दशक के उत्तरार्ध और सातवें दशक के पूर्वार्ध तक कोई सम्पर्क नहीं बना। जबकि अंतर्मन में खिंचाव बराबर बना रहा था। हालाँकि तब क़तई अनुमान नहीं था कि उनसे जुड़ने का ज़रिया जैविक–प्रेम से बनेगा ।

दरअसल हुआ यूँ कि सातवें दशक के 'जयप्रकाश आंदोलन' के दौरान मठी गांधीवादियों के ख़ेमे की खाँटी आंदोलनकारी आशा भार्गव से सम्पर्क हुआ। जो 'जैविक–प्रेम' से होता हुआ कालांतर में जीवन पर्यन्त साथ रहने के संकल्प में अंततः परिणत हो ही गया । प्रेम–प्रपंच (सम्पूर्ण क्रांति का दौर) के दौरान मैं **दैनिक सन्मार्ग** के साथ–साथ आपातकाल में चर्चित भूमिगत पत्र **'रणभेरी'** की **चारभुजा टीम** के सक्रिय सदस्य की भूमिका में था तो **आशा नारायण देसाई** की पत्रिका **'बुनियादी यक़ीन'** सहित देशभर में प्रकाशित भूमिगत साहित्य के प्रसार में लगी हुई थी । अंततः आपातकाल की समाप्ति के बाद ५ फ़रवरी, ७७ को जेल से रिहाई और २० फ़रवरी को विवाह बंधन में बंधकर आजीवन की 'सज़ा' सहर्ष स्वीकार कर ही ली गुरु !

विवाहोपरांत हमलोगों ने रुचि–कर्म के अनुकूल हनीमून (हनी का अर्थ मीठा और मून का अर्थ पखवाड़ा) का गंतव्य गोवा, मनाली नहीं, चम्बल के बीहड़ों में स्थित गांधी **आश्रम जौरा** को चुना । वहाँ लोकनायक जयप्रकाश नारायण के आग्रह पर डाकुओं के पुनर्वास के लिए **सेलम नानजुदैया सुब्बाराव** धूनी रमाये बैठे थे । (स्मरण रहे कि **सुब्बाराव जी** का जन्म ७ फ़रवरी १९२९ को कर्नाटक के बेंगलुरु शहर में हुआ ज़रूर था लेकिन उनके पुरखे तमिलनाडु के सेलम से वहाँ आये थे।)

आकंठ गांधीवादी **सुब्बाराव** जी के **जौरा** गांधी आश्रम का प्रवास मुझ समाजवादी के लिए प्रशिक्षण की पराकाष्ठा थी, कहाँ मैं समाजवादी अराजकता का अभ्यस्त और कहां वहाँ का संयमित सादगी–भरा अनुशासन । समयबद्ध जीवनचर्या, प्रार्थना ! आशा सर्वोदयी संस्कार के कारण अभ्यस्त थी । लेकिन मैं बनारसी प्राणी भंग–मिठाई के बगैर व्याकुल हो उठा था। किसी को गरिया भी नहीं सकता था क्योंकि चुनाव स्वयं का ही था । **जौरा** आने से पहले डाकुओं पर लिखी बांग्ला पुस्तक **'अभिशप्त चम्बल'** (**प्रख्यात पत्रकार तरुण कुमार भादुड़ी** जो



भोपाल में **स्टेट्समैन** के ब्यूरो व **जया बच्चन** के पिता भी थे) के ज़रिये बीहड़ और डाकुओं के जीवन से अच्छी तरह परिचित हो चुका था। उस अविस्मरणीय पुस्तक पर बाद में चर्चित फ़िल्म भी बनी थी।

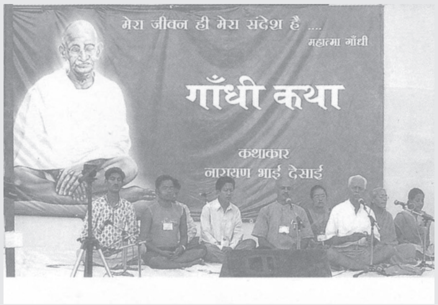
आश्रम की गतिविधि सर्वधर्म प्रार्थना से प्रारम्भ हुआ करती थी । शास्त्रीय संगीत में **सिद्ध भाई जी** (देश-विदेश में फैले लाखों युवजन **सुब्बाराव जी** को प्यार से **भाईजी** कहते हैं।) की आवाज़ में जादू है । वे कई भाषाओं में प्रेरक गीत गाते हैं। उनका सारा जीवन ख़ास तौर पर युवजनों को राष्ट्रीयता, भारतीय संस्कृति, सर्वधर्म सम्भाव और सामाजिक उत्तरदायित्वों की ओर जोड़ने में बीता। वे सही मायने में एक मोटिवेटर थे ।

भाईजी का कोई स्थायी निवास नहीं था । वे वर्ष भर घूमते रहते । राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्भावना के देश के कोने-कोने में आयोजित शिविरों का निर्देशन करते रहते थे । देश के हर बड़े छोटे शहर में युवजन उन्हें जानते थे । वे जहाँ से गुज़रना हो, पहले लिख देते थे । वे प्रायः अपने युवा साथियों के घर पर ही ठहरते हैं क्योंकि देश के लाखों युवजनों का घर उनके अपने घर जैसा था।

एक लम्बे समय से खादी का हाफ़ पैंट और बुशर्ट ही भाई जी का पहनावा था। हमने उनको दिसम्बर की कड़कड़ाती ठंड में एक पूरी बाँह की ऊनी शर्ट और हाफ़ पैंट में ही देखा था । यह उनकी आत्मशक्ति थी। दुनिया के कई देशों में यात्रा करते हुए भी उनका यही पहनावा होता था । लोग उनके व्यक्तित्व व सादगी से उनके पास खिंचे चले आते थे। उनके चेहरे में एक आभामंडल था जो एक बार उनसे मिलता था उन्हें कभी भूल नहीं पाता, उनका हो जाता था । कई पीढ़ियों के लाखों लोगों ने उनसे प्रेरणा ली थी ।

एक ऐसे दारुण समय में जब लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष और समतावादी समाज में विभाजनकारी केंद्रीय सत्ताधारी दल की करतूतों से देश का भविष्य दांव पर लगा नज़र आ रहा है, ऐसे में कई दशकों से जनहितार्थ सेवा की मशाल को सतत जलाये रखकर तमाम-तमाम देश के युवजनों के प्रेरणास्त्रोत बने हुए एस. एन सुब्बाराव भरोसा जगाते थे। ❑

बी-३१, सहेदव मार्ग,
श्री जीनगर, दुर्गापुरा,जयपुर



भारत माता की तबीयत कैसी है ?

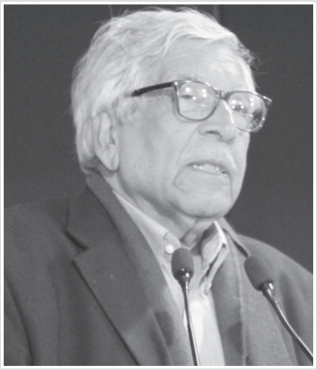
श्री एस.एन. सुब्बाराव जयपुर आए हुए थे। प्राकृत भारती में राष्ट्रीय युवा शिविर चल रहा था ।

राजस्थान, पंजाब, केरल, असम, मणिपुर आदि कई राज्यों से नौजवान जयपुर पहुंचे थे। दिन में सुब्बाराव जी के साथ श्रमदान व शिविर साधना तथा शाम को नारायण भाई की गांधी कथा का रसास्वादन। यही कार्यक्रम था। तब सुब्बाराव जी लगभग अस्सी बरस के थे। शरीर को रोग भी लगे थे। मगर वे कभी कहीं भी प्रकट नहीं होते। कोई पूछे उनसे कि तबीयत कैसी है तो वापिस प्रश्न करते हैं भारतमाता की तबीयत कैसी है ? फिर एक मीठी हंसी हंस कर कहते थे। भारतमाता की तबीयत से तो मेरी तबीयत ज्यादा अच्छी है।

सुब्बारावजी आज नहीं हैं मगर भारतमाता की तबीयत आज भी अच्छी नहीं है !!! ❑

साबरमती के बोलते पत्थर

❑



योगिंदर के.अलघ

❑

गांधीजी का साबरमती आश्रम जब जनमा, तब से ही विवादों का जनक रहा है। जन्म के साथ ही गुलामी के खिलाफ चेतना जगाता, गांधी की बोली बोलता रहा। नमक आंदोलन के लिए जब गांधी इसे यह कहकर छोड़ चले कि अब आजादी के बाद ही इस आश्रम में कदम रखूंगा, तब से यह आश्रम हमारे लिए गांधी के कदम और उसकी दिशा पहचानने का स्थान बन गया। अब यह एक पुल है जिससे होकर गुजरता हमारा इतिहास, हमें मूल्यों से मूल्यहीनता की तरफ हमारे सफर की पहचान कराता है। लेकिन सुनें हम तो यह आज भी बोलता है। यहां का हर पत्थर बोलता है। इसे रेखांकित कर रहे हैं प्रो. अलघ। ❑

अगर आप उन तालिबानियों में नहीं हैं जिन्होंने बर्बर प्रतिशोध से भर कर अफगानिस्तान के बामियान में बुद्ध की प्रतिमा का विनाश किया था, तो मैं आपसे कहना चाहता हूं कि आप पत्थरों की आवाज सुन सकते हैं। अभी-अभी अहमदाबाद के आईआईएम को नये निर्माणों के साथ आधुनिक बनाने के फैसले की खबर मिली। कहा गया कि वहां का वर्तमान कॉरिडोर अंधेरा और सीलन भरा है ! यह खबर पढ़ते ही मेरा मन ६० के दशक के मध्य में लौट गया जब मैं अमरीका के फिलाडेल्फिया के पेंसिलवानिया विश्वविद्यालय में पढ़ा भी रहा था और अपना शोध भी पूरा करने में लगा था। एक दिन लुइस काह्न एक रेशमी पर्दे के सामने आ खड़े हुए जिसके भीतर चमकती एक रोशनी हम देख पा रहे थे। फिर अपनी नाटकीयता को गहराते हुए उन्होंने दिखाया अहमदाबाद के आईआईएम के नये स्वरूप का मॉडल !

उन्होंने पूछा : आपकी पहली प्रतिक्रिया?

मैं अगली कतार में बैठा था। मुझसे ही पूछा: आप अहमदाबाद को जानते हैं?

जी हां!

तो बताइए!

मैं बोल पड़ा, यह बेहद अभारतीय है!

वे खीझे स्वर में बोले, मतलब क्या है आपका ?

मैं समझ गया कि मैं फंस गया हूं। मैंने कहा, हमारा देश गरीब है। यह मॉडल तो ताकत का प्रतीक लगता है।

उन्होंने मुझे घूर कर देखा, कुछ बुदबुदाये और फिर बोले, नहीं, यह मठ है!

मैं तिलमिला कर रह गया।

साबरमती कभी अहमदाबाद में बहने वाली एक नदी हुआ करती थी। बापू का आश्रम इसके किनारे पर बसा है। जब भी मैं अपनी सांसारिक और प्रशासकीय जिम्मेदारियों से परेशान हो जाता था- कम ही उम्र में यह मेरे सिर आ पड़ा था- तो मैं कुछ पल बैठने के लिए 'हृदय कुंज' चला जाता था। वहां रखा बापू का चश्मा, लिखने की उनकी मेज, उनकी चप्पलें निहारता था, और फिर मुझे लगता था जैसे जिन्दगी को इस कदर बोझिल बनाने के लिए मेरी खिंचाई करते हुए वे कह रहे हों, 'अरे, नौजवान, कभी मेरी जिम्मेदारियों और परेशानियों के बारे में भी सोचा है!!'

साबरमती के किनारे जाकर कुछ पल बैठता था मैं और फिर से

ताजा होकर, कैंटीन में साक-पूरी खाता था और फिर अपनी दुनिया में लौट पड़ता था।

फिर मार्च २००२ का सांप्रदायिक दंगा फूटा। चुन्नी काका (चुन्नीभाई वैद्य) ने फोन किया: 'मैं और नारायण भाई एक शांति मार्च कोचरब आश्रम से साबरमती आश्रम तक निकाल रहे हैं। मुंह पर काली पट्टी होगी और हाथों में **'अहमदाबाद को शांति चाहिए'** ऐसा प्ले-कार्ड होगा। क्या आप इस शांति मार्च में शामिल होना चाहेंगे?' मैंने तुरंत हामी भरी। उस दिन मेरे साथ मेरा बेटा भी आया था। ४० लोगों से इस मार्च की शुरुआत हुई थी। अहमदाबाद नफरत और हिंसा की आग में जल रहा था। हमारे पास कोई पुलिस-सुरक्षा नहीं थी लेकिन मैंने देखा कि धीरे-धीरे रास्ते में लोग शामिल होते गये और गांधीजी द्वारा स्थापित गुजरात विद्यापीठ तक पहुंचते-पहुंचते हमारी संख्या सैकड़ों में हो गयी थी... लोग साथ आते गये और कारवां बनता गया। आश्रम में शांति की शपथ पढ़ी गयी और चुन्नी भाई ने, नारायण भाई के होते हुए भी मुझसे वह शपथ पढ़ने को कहा गया। दुनिया भर में वह खबर प्रचारित हुई।

इसके सालों बाद मैं भारत-पाक प्लैनिंग कमीशन का पहला प्रतिनिधिमंडल लेकर **तक्षशिला** गया था। **तक्षशिला** अब पाकिस्तान में है। **तक्षशिला** घुमाते हुए, वहां के अधिकारियों ने उसे इस्लामी जामा पहनाने की बहुत कोशिश की, और अपनी मर्यादा के भीतर जब मैंने कुछ कहना चाहा तो उन्होंने उसे इस्लाम विरोधी झूठा प्रचार कहकर नकार दिया। लेकिन मैंने महसूस किया कि वहां के पत्थर आपसे अपनी अलग कहानी कहते हैं। फिर मैंने नालंदा में भी पत्थरों को ऐसा ही कहते सुना।

इसी बीच मुझे स्पेन के प्रधानमंत्री के साथ चर्चा का एक मौका मिला जब बिमल प्रसाद ने खास विशेषज्ञों की उस टोली में मुझे शामिल कर लिया था जिन्हें वहां की नदियों और उसके आसपास के इलाकों के विकास की योजना पर प्रधानमंत्री से बात करनी थी। तब मैंने उनसे कहा था कि आपको १० साल की बाढ़ के आंकड़ों के आधार पर कोई योजना नहीं बनानी चाहिए, क्योंकि हो सकता है कि अगली बारिश में ही वह करोड़ों रुपयों का काम बहा ले जाये। यह सब कहते हुए मैंने अपने मित्र वास्तुकार **चार्ल्स कोरिया** का जिक्र-सा किया था कि उन्होंने साबरमती आश्रम का नवीनीकरण करते समय उसकी आत्मा से कोई छेड़छाड़ नहीं की। लेकिन अब वहां जो होने जा रहा है, उससे मेरी रूह कांपती है।

दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में आप आज भी सुबह टहलने निकल जायें तो वहां के पत्थर आपसे बातें करने लगते हैं। वहां की अरावली पर्वत शृंखला में पानी की बहुत कमी है। इतिहास बताता है कि रोहिले तो प्यास के कारण ही भागे थे वहां से। लेकिन मैं भागने वालों में से नहीं था। इसलिए मैंने सैटेलाइट की आंख का सहारा लिया और पता करवाया कि यहां कहां पानी निकलेगा। ऐसा ही तब हुआ जब हमने सरदार सरोवर बांध की नींव डालते समय एक हजार साल की बाढ़ और नदी के इतिहास का ध्यान रखा था।

और अब ये लोग उस कमरे को बदलना चाहते हैं जहां बड़े होकर **नेहरू** ने १४ अगस्त, १९४७ की मध्यरात्रि को पूरी दुनिया को संबोधित करते हुए कहा था: **जब पूरी दुनिया सो रही है, भारत जीवन और स्वतंत्रता की सुबह में आंखें खोल रहा है।**' क्या यह कमरा दुनिया



के हर देश में मौजूद है जिसे वे अपनी राष्ट्रीय धरोहर मान कर संजोते हैं? यहां हम तो पाटलिपुत्र के वारिस हैं! हमारे पूर्वजों में **राजा पोरस, पृथ्वीराज चौहान,** अंग्रेजों द्वारा सताये **बहादुर शाह जफर** भी हैं। **दांडी मार्च हमारी ही धरोहर है।** इन सबको आप बदल देंगे?

पोरबंदर में **गांधीजी** के जन्मस्थल का जैसा पुनर्विकास किया गया है, उसने वहां की सादगी की गरिमा को बर्बाद कर दिया है। कुछ दशक पहले तक वह एक संकरी-सी गली हुआ करती थी जो आपको ईंट-पत्थरों से बनी उस तीन मंजिला घर तक ले जाती थी जिसके हर कोने में शांति विराजती थी। आप वहां बैठते थे तो आपको इस कठिन यात्रा को पूरा करने का संतोष मिलता था। अब तो गलियां चौड़ी कर दी गयी हैं। अब वहां दुकानें नहीं हैं। उस मकान का भी नवीनीकरण कर दिया गया है। अब वहां जो सब है, उसकी तुलना, पहले जो सब था उससे करने पर उबकाई आती है।

मुझे लगता है, हमें उन पत्थरों को संजोना सीखना चाहिए जिन पत्थरों के पास अपनी कुछ यादें भी हैं और उनके पास अपनी कुछ बातें भी हैं। ❑

गांधी मार्ग से साभार
अनुवाद-प्योली

'हमें दुनिया का सामना शांत व साफ निगाहों से करना है हालांकि आज उसकी आंखें रक्तरंजित हैं। चारों ओर घृणा का वातावरण छाया हुआ है। अधीर देशप्रेमी, यदि उनके लिए संभव हुआ तो, इस हालात का फायदा आसानी से हिंसात्मक तरीकों से उठा सकते हैं... लेकिन मेरा पूर्ण विश्वास है कि भारत को दुनिया के लिए एक अलग ही संदेश देना है... यदि भारत ने हिंसात्मक साधनों को अपनाया तो यह हम सबकी परीक्षा की घड़ी होगी। मेरा जीवन अहिंसा-धर्म द्वारा भारत की सेवा के लिए समर्पित है जिसे मैं हिन्दू धर्म की बुनियाद मानता हूं... यदि भारत हिंसा के साधनों को अपनाता है तो वह अस्थाई विजय भले ही प्राप्त कर ले, मेरे हृदय में उसका गौरवपूर्ण स्थान नहीं रह जाएगा... मैंने भारत की आजादी के लिए जीवन-भर कोशिश की है लेकिन यदि इसे सिर्फ हिंसा द्वारा ही पाया जा सकता है तो मैं इसे पाना नहीं चाहूंगा। स्वाधीनता प्राप्त करने के साधन भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना की साध्य!'

निवेदन

❑

प्रो. अलघ विश्वप्रसिद्ध अर्थशास्त्री हैं। राजस्थान को भी उनके साथ का थोड़ा सुअवसर मिला है। प्रो.वी.वी. जैन के निवेदन को स्वीकार करके वे जोधपुर विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र विभाग के विभागाध्यक्ष बन कर जोधपुर आ गये थे। यह आलेख बोलता है कि वे जीवन और इंसानियत के अर्थशास्त्री हैं।
यह एक अप्रतिम लेख है। पाठकों से निवेदन है कि अगली पीढ़ियों के लिए इसे संभाल कर रखें।

❑



विमलेश चन्द्र

❑

मास्टर साहब विमलेश चन्द्र जी बाल दिवस के बहाने चाचा नेहरू को याद कर रहे हैं। कहने का अंदाज यह है कि एक प्रधानमंत्री ऐसा भी था जो भीड़ में उतर कर गुब्बारे वाले गुब्बारा खरीद कर बच्चों में बांट दिया करता था। बख्तरबंद गाड़ियों में नहीं चलता था। किसी तरह की सुरक्षा उसे मंजूर नहीं थी। बालकों को फूल देने वाला और गुब्बारा बांटने वाला आदमी यह जवाहर लाल नेहरू था। फूलों से प्यार करता था। जनतंत्र में विश्वास करता था और गणतंत्र की स्थापना कराने वाला भी था। आज बाल दिवस उत्सव हो गया है। बचपन की रक्षा का त्यौहार हो गया है। मगर यह रस्म न बन जाये इसके प्रति हमें सावधान रहना है। चाचा नेहरू जिंदाबाद।

❑ सं.

एक थे चाचा नेहरू
एक है बाल दिवस

❑

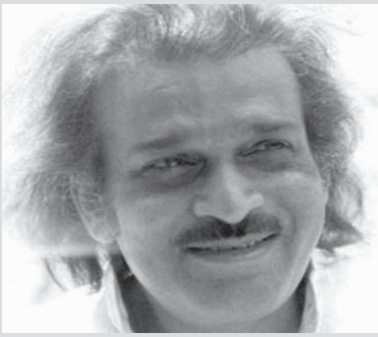
किसी ने ठीक ही कहा है कि नींव जितनी पक्की होगी, इमारत उतनी ही मजबूत होगी। बच्चे तो देश का भविष्य हैं और यदि हम चाहते हैं कि इमारत रूपी हमारा देश मजबूत हो तो हमें पहले बच्चे रूपी नींव को मजबूत करना होगा। इसी भावना को लेकर चलने वाले हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री **पण्डित जवाहर लाल नेहरू के जन्मदिन पर १४ नवम्बर को समूचे देश में बाल दिवस मनाया जाता है।**

आज हम देख रहे हैं कि बच्चों का बचपन छीना जा रहा है। आज भी भारत में जिन बच्चों के हाथों में कॉपी-पेन होना चाहिए, वे सार्वजनिक स्थानों जैसे- मन्दिर, मस्जिद, रेलवे-स्टेशन, बस स्टैंड आदि पर भीख माँगते नज़र आते हैं। यह समाज का दोष है कि बच्चे अपराधों में भी आसानी से लिप्त हो जाते हैं। शिक्षा से ये बच्चे कोसों दूर चले जाते हैं। ऐसे में बच्चों के अधिकार, देखभाल एवं शिक्षा के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए हर साल १४ नवम्बर को बाल दिवस मनाया जाता है। जिससे बच्चे अपने अधिकारों के विषय में जानें, ताकि कोई भी व्यक्ति उनका शोषण नहीं कर सके एवं उनका बचपन सुरक्षित रहे।

विद्यालयों में इस दिन सांस्कृतिक कार्यक्रमों, खेल-प्रतियोगिताओं, नाटकों, निबन्ध-प्रतियोगिताओं आदि का आयोजन किया जाता है। रेडियो एवं दूरदर्शन पर भी बच्चों के लिए कई तरह के लाभप्रद कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है। बच्चों को बाल-अधिकारों की जानकारी देने के लिए रैलियों का भी आयोजन किया जाता है। मगर दुखदायी सच यह है कि इतने सब आयोजन केवल रस्म अदायगी बन गये हैं।

नेहरू हमेशा बच्चों को फूल की कलियों की भांति नाजुक मानते थे। उनका मानना था कि बच्चे देश का भविष्य हैं, अगर वे पढ़ने-लिखने के बजाय आजीविका कमाने हेतु खून पसीना बहायेंगे तो देश का भविष्य अंधकारमय हो जायेगा एवं देश तरक्की नहीं कर पायेगा। शिक्षा प्राप्त

शेष पृष्ठ...१६ पर



बाल साहित्य के सितारे

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

एक थे सर्वेश्वर जी। पूरा नाम था सर्वेश्वर दयाल सक्सेना। इलाहाबाद से आये थे, दिल्ली में आकर बस गये। पेशे से पत्रकार थे। दिनमान साप्ताहिक में काम करने लगे थे। उनकी नजर पैनी थी और बात बहुत पते की करते थे। यही कारण था कि पूरे देश में उनकी धाक जम गयी थी। सर्वेश्वर जी अपनी दो बेटियों शुभा और विभा के साथ बंगाली मार्केट के पास छोटे से मकान में रहते थे। शाम को नाटक देखना और संगीत सुनने जाना या मित्रों के साथ गप्प लगाना, यही उनके शौक थे। उनका मन बालकों के बीच रमता था। वे बालकों के लिए लिखते थे। शुभा और विभा के साथ बैठकर कविताएं लिखते थे। नाटक लिखते थे। बालकों के मार्फत बड़े लोगों तक अपनी बात पहुंचाने का उनका एक तरीका बहुत अच्छा था। हमें आज भी सर्वेश्वर जी याद आते हैं। ❑



महंगू की टाई

महंगू ने महंगाई में,
पैसे फूंके टाई में,
फिर भी मिली न नौकरी
औंधे पड़े चटाई में
गिटपिट करके हार गये,
टाई ले बाजार गये,
दस रुपये की टाई उनकी
बिकी नहीं दो पाई में
❑

भों-भों, खों-खों



हाथ हमारे हैं मजदूर
पैर हमारे बने किसान,
कोई छोटा-बड़ा नहीं है
हम सब बच्चे एक समान।
आओ, आओ, मिलकर गाएं
चूं चूं चूं चिड़ियों का गान,
भों-भों, खों-खों नहीं करेंगे
देश हमारा हिन्दुस्तान

❑



ऊंट पर चूहा

चूहा एक ऊंट पर चढ़
झटपट चला बहादुरगढ़
राह में गहरा ताल पड़ा
चूहे का ननिहाल पड़ा।
चूहा खा-पी सो गया
ऊंट नहा कर खो गया।

❑



नेता

लपसी सड़प,
मलीदा हड़प,
खायें जलेबी
गड़प-गड़प,
हलुआ, सतुआ
और समोसा,
जो भी पाया
सभी भकोसा,
फिर भी कहें
हाय हम भूखे,
इनके डर से
जंगल में सूखे।

❑

पृष्ठ...१३ से आगे

करने का सभी को अधिकार है एवं इस अधिकार से बच्चे वंचित नहीं रहने चाहिए। उनसे उनका बचपन छीनने का हमें कोई हक नहीं है। और हमारा शिक्षा-तंत्र स्वयं कितना बाल-वत्सल है???

नेहरू जी के बाल प्रेम के प्रेरणादायी प्रसंग –

एक दिन **तीन मूर्ति भवन** के बगीचे में लगे पेड़-पौधों के बीच से गुजरते हुए घुमावदार रास्ते पर प्रधानमंत्री **नेहरू जी** टहल रहे थे। उनका ध्यान पौधों पर था। वे पौधों पर छायी बहार देखकर खुशी का इजहार कर ही रहे थे कि उन्हें एक छोटे बच्चे के रोने की आवाज सुनायी दी। **नेहरू जी** ने आसपास देखा तो उन्हें पेड़ों के बीच एक दो माह का रोता-बिलखता बच्चा दिखायी दिया। **नेहरू जी** ने मन ही मन सोचा- इसकी माँ कहाँ होगी ? उन्होंने इधर-उधर देखा, मगर उसकी माँ कहीं भी नजर नहीं आ रही थी। **नेहरू जी** ने सोचा शायद वह बगीचे में ही कहीं माली के साथ काम कर रही होगी। **नेहरू जी** यह सोच ही रहे थे कि बच्चे ने रोना तेज कर दिया। इस पर उन्होंने उस बच्चे की माँ की भूमिका निभाने का मन बना लिया। वह बच्चे को गोद में उठाकर खिलाने लगे और तब तक उसके साथ रहे, जब तक उसकी माँ वहाँ नहीं आ गयी। बच्चे को देश के प्रधानमन्त्री के हाथ में देखकर उसकी माँ को विश्वास ही नहीं हुआ।

एक बार जब पण्डित जवाहर लाल नेहरू तमिलनाडु के दौरे पर थे, तब उन्होंने देखा कि जिस सड़क मार्ग से वे गुजर रहे थे वहाँ लोग साइकलों पर खड़े होकर तो कहीं दीवारों पर चढ़कर उन्हें निहार रहे थे। वे देश के प्रधानमंत्री की एक झलक पाने को बेताब थे। इस भीड़-भरे इलाके में नेहरू जी ने देखा कि दूर खड़ा एक गुब्बारे वाला पंजों के बल खड़ा डगमगा रहा था, ऐसा लग रहा था कि उसके हाथों में तरह-तरह के रंग-बिरंगे गुब्बारे मानो नेहरू जी को देख लेने के लिए डोल रहे हों और कह रहे हों हम आपका तमिलनाडु में स्वागत करते हैं। नेहरू जी की गाड़ी जब गुब्बारे वाले तक पहुँची और गाड़ी से उतरकर वे गुब्बारे खरीदने के लिए आगे बढ़े तो गुब्बारे वाला हक्का-बक्का रह गया। नेहरू जी ने तमिल जानने वाले अपने सचिव से कहकर सारे गुब्बारे खरीदवाये एवं वहाँ उपस्थित सभी बच्चों में वे गुब्बारे बँटवा दिये। बच्चों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

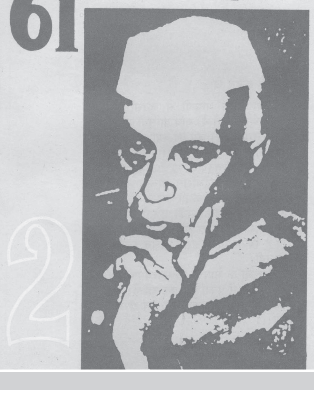
नेहरू जी के प्रसंगों से हमें भी प्रेरणा लेनी चाहिए कि हम भी अनाथ बच्चों को स्टेशनरी, खिलौने, कपड़े एवं जरूरत की अन्य वस्तुएं भेंट कर उनके जीवन में खुशहाली ला सकते हैं, उनका बचपन लौटा सकते हैं। हम छोटी सी मदद से किसी का जीवन बदल सकते हैं ❑

वरिष्ठ अध्यापक
राजकीय मोहता बालिका उ.मा.वि.
राजगढ़ (चूरू)
मोबाइल नम्बर –९४६०४८९९४०



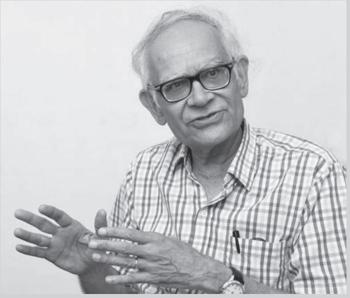
जो बात मैं पहले भी कह चुका हूं उसे फिर दुहाराता हूं कि मैं हिन्दुस्तान में जनतंत्र की संपूर्णता में विश्वास रखता हूं। मैं इस बात में भी विश्वास रखता हूं कि हमारे तमाम जरूरी मामलों का फैसला करने में हिन्दुस्तान के लोगों की आवाज आखिरी होनी चाहिए।

४ सितम्बर, १९३६



हम डिजिटल युग में बच्चों की रक्षा कैसे करें ?

❑



कृष्ण कुमार

❑

शिक्षाविद् कृष्ण कुमार जी एनसीईआरटी के निदेशक रहे हैं। शिक्षा जगत में कृष्ण कुमार जी का अनूठा योगदान रहा है। शिक्षा को कृष्णकुमार जी बड़े व्यापक अर्थों में व्याख्यायित करते रहे हैं। उनकी व्याख्या भी सदा रम्य रचना की तरह पठनीय रही है। किताबी भाषा से बहुत दूर। कृष्ण कुमार जी बालकों के लालन-पालन से लेकर सामाजिक मूल्यों की विशेष चिंता करते हैं। वे स्वयं बाल साहित्य के रचनाकार हैं और उन्होंने बाल साहित्य की एक महत्वपूर्ण पुस्तक महके सारी गली-गली का संपादन भी किया है।
उनकी प्रसिद्ध पुस्तक राज समाज और शिक्षा के अलावा चूड़ी बाजार में लड़की, दीवार का इस्तेमाल जैसी कई प्रमुख पुस्तकें हैं। प्रस्तुत आलेख में कृष्णकुमार जी की चिंता आज के डिजिटल युग में बचपन को बचाने की है। ❑सं.

अमेरिकी कांग्रेस में हाल ही में एक चर्चा के दौरान, यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया था कि बड़ी सोशल मीडिया कंपनियों के लिए, बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य की तुलना में आर्थिक लाभ ज़्यादा बड़ी प्राथमिकता है। फेसबुक की एक विसलब्लोअर फ्रांसेस हॉगन ने कहा कि उनकी पूर्व नियोक्ता कंपनी एक संदिग्ध तरीके से काम कर रही है। उन्होंने इस कंपनी पर सामाजिक दरारों को बढ़ावा देकर बच्चों को आघात पहुंचाने और लोकतंत्र की क्षति करने का आरोप भी लगाया।

हॉगन ने युवा उपभोक्ताओं की फेसबुक पर उपस्थिति की समस्या के तकनीकी पहलू को उजागर किया। उदाहरण के लिए, कैसे यह कंपनी अपने यूज़र्स को एक कंटेंट पर ज़्यादा समय तक टिके रहने के लिए ललचाती है ताकि विज्ञापनदाता उतनी देर में संभावित ग्राहकों को लक्षित कर सकें । हॉगन के दर्शकों ने इन जटिल विवरणों को कितनी दूरदर्शिता से समझा, यह कहना मुश्किल है, लेकिन वे उनसे सहमत लग रहे थे कि फेसबुक जैसे हाई-टेक दिग्गजों पर मौजूदा कानूनी प्रतिबंधों को और कड़ा करना होगा। पहले भी कई बार ऐसी आशा की गयी है।

जैसा कि अपेक्षित था, फेसबुक के जाने-पहचाने चेहरे मार्क ज़करबर्ग ने तुरंत हॉगन पर एक 'झूठी तस्वीर' बनाने का आरोप लगाया। उलटे, डिजिटल दुनिया के दिग्गजों ने हमेशा की तरह अपनी बौद्धिक क्षमता पर विश्वास व्यक्त किया कि बच्चों की ओर से अगर माता-पिता और शिक्षक किसी भी समस्या को सामने लाते हैं तो वे उसका समाधान अवश्य कर देंगे!

हॉगन के आरोपों की एक प्रमुख कड़ी यह है कि फेसबुक कंपनी अपने किशोर ग्राहकों की आत्म - चेतना पर प्रभाव डालती है। यह भी कोई नया आरोप नहीं है। दिलचस्प बात यह है कि जिस नुकसान का उल्लेख हो रहा है, उसके लिए किस हर्जाने का भुगतान पीड़ितों को किया जाये, यह तय नहीं किया जा सका है। न ही यह आकलन करने का प्रयास किया गया है कि सोशल मीडिया में उनकी भागीदारी के परिणामस्वरूप बच्चों की पवित्रता और बौद्धिक विकास के पोषण में शिक्षक के लिए बालकों को संवारना

कितना कठिन हो गया है।

दुनिया भर में शिक्षा प्रणाली जिस समस्या का सामना कर रही है वह कहीं अधिक व्यापक है। इस साल शांति के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता मरिया रैसा ने एक साल पहले बीबीसी को दिये एक साक्षात्कार में इसे सटीक रूप से रखा। फिलीपींस में उदार लोकतंत्र के पतन का कारण बनने वाले कारकों को गिनाते हुए उन्होंने रेखांकित किया कि कैसे सोशल मीडिया और इंटरनेट की अन्य सेवायें मानव व्यवहार को अपनी मन मुताबिक दिशा में मोड़ रही हैं। उन्होंने इशारा किया कि कैसे एक रणनीति के मुताबिक लोगों के मन में हेर-फेर की जाती है ताकि, प्रचारित कथनों और वास्तविकता में भेद करने की उनकी क्षमता सुन्न हो जायक।

शिक्षा के लक्ष्यों में व्यवहार परिवर्तन एक प्रमुख बिंदु रहा ही है। मुझे आश्चर्य नहीं होता जब इसका उल्लेख शिक्षा के उद्देश्यों में से एक के रूप में किया जाता है। शिक्षा के कई अन्य पहलू भी उभरे हैं, लेकिन व्यवहार में बदलाव हमें आकर्षित करता ही है। कोरोना महामारी के दौरान इसे अचानक बढ़ावा मिला जब शिक्षा की पूरी प्रणाली ने ऑनलाइन शिक्षण को अपनाया और बच्चों को वेब के जंगल में धकेल दिया। लाखों माता-पिता में से कुछ ही जानते थे कि कैसे बच्चों को मूल्यों का उपयुक्त रक्षा कवच पहनाया जाये। यहां तक कि स्कूल बंद होने के बावजूद, डिजिटल विक्रेताओं का वैश्विक सदर बाजार आखिरकार भारत के बच्चों के लिए पूरी तरह से खुल गया।

दो प्रमुख प्रश्न सीधे शिक्षा से संबंधित हैं। एक यह है कि बच्चों को अनुपयुक्त सामग्री से कैसे बचाया जा सकता है? ऐसी सामग्री की विभिन्न किस्में-घृणित सामग्री से लेकर पोर्नोग्राफ़ी तक न केवल अभी स्वतंत्र रूप से उपलब्ध हैं, अपितु इसके प्रदाता बच्चों पर अधिक ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। बच्चे लाभ का गणित हैं क्योंकि उनके मृदु मन को इन दिशाओं में मोड़ देने से वे बरसों तक इन निकृष्ट सेवाओं के एक वफादार उपभोक्ता बने रहेंगे न!

दूसरा सवाल है बच्चों को डिजिटल मीडिया की लत से बचाना। जब वे शिक्षा सचिव के रूप में कार्यरत थे, तब स्वर्गीय सुदीप बनर्जी ने 'एक लैपटॉप प्रति बच्चा' योजना को अवरुद्ध कर दिया क्योंकि उन्हें यकीन था कि यह कदम बच्चों को जड़ बना देगा। वह चिंतित थे कि कम उम्र में डिजिटल आदान-प्रदान कहीं व्यसन न बन जाये। अब स्थिति उससे कहीं अधिक खराब है जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। महामारी ने बच्चों को ऑनलाइन सीखने के लिए मजबूर करके इंटरनेट पर आश्रय को और उग्र कर दिया है।

तकनीकी दिग्गजों और उनकी शैक्षणिक सेनाओं ने उस इलाके में घुसपैठ की है जहां परिवार और स्कूल बच्चों को संवारते थे। इन दो चिरकालिक संस्थानों ने मिलकर बचपन को हिंसक खतरों से बचाने का प्रयास किया। आज, जब डिजिटल उद्योग ने घर और स्कूल दोनों के क्षेत्र में अतिक्रमण किया है, तो कोई नहीं जानता कि बच्चों को उन चीजों के संपर्क से कैसे बचाया जाए जिन्हें उन्हें नहीं देखना चाहिए और जो संदेश उन्हें प्राप्त नहीं होने चाहिए। अश्लील सामग्री के अलावा, यहां विभिन्न प्रकार के झूठ और घृणित प्रचार हैं।

हॉगन ने दुनिया को उस व्यापक स्केल के प्रति सचेत किया है जिस पर अगणित झूठे तथ्य, झांसे और अफवाहें सोशल मीडिया के माध्यम से फैलती हैं। न केवल वे भ्रामक हैं बल्कि इन ख़बरों को नियंत्रित करने वाली कंपनियों के लिए लाभ के स्रोत के रूप में भी काम करती हैं। हॉगन के विसलब्लोइंग खुलासे की पुष्टि फेसबुक के स्वयं के क्लीन-अप गतिविधि के दावों से होती है। ग्लोबल कम्युनिटी स्टैंडडर्स एनफोर्समेंट रिपोर्ट के हालिया संस्करण में फेसबुक ने कहा कि उसने बदमाशी और उत्पीड़न के ६.३ मिलियन अंश, संगठित अभद्र भाषा के ६.४ मिलियन अंश, और आत्मघाती सामग्री के २.५ मिलियन अंश हटा दिये हैं। फोटो-शेयरिंग प्लेटफॉर्म इंस्टाग्राम पर भी इसी तरह की सफाई के उपाय किये गये।

संरक्षित बचपन कैसा हो, यह ख़ाका बनाने में पश्चिम ने लंबा समय लिया। बच्चों को शोषण से सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक कानूनी और संस्थागत ढांचे को स्थापित करने में

यूरोप को लगभग दो शताब्दियां लगीं। अनुभव सिखाता है कि बाल जीवन लहलहाये, इसके लिए नितांत आवश्यक है राज्य और समाज के बीच आम सहमति हो। औद्योगिक घरानों की भूमिका भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं।

पश्चिमी देशों और भारत में भी मौजूद विस्तृत कानूनी ढांचे के बावजूद विभिन्न प्रकार के सामाजिक दुर्भाग्य में फंसे बच्चों को न्याय दिलाना आसान नहीं रहा है।

डिजिटल युग में बच्चों की रक्षा करना कहीं अधिक कठिन हो गया है। इन नेटवर्कों में बच्चों की उत्सुक भागीदारी ने संचार नेटवर्क में छिपी हानिकारक क्षमता को बहुत बढ़ा दिया है। हॉगन के खुलासे एक वास्तविकता की ओर इशारा करते हैं, जिसे दुनिया ने लगभग दो दशक पहले सोशल मीडिया के आगमन के बाद से नजरअंदाज करने की पूरी कोशिश की है।

अगर हेरोल्ड इनिस आज जीवित होते तो उन्होंने अपने १९५१ के क्लासिक 'द वॉइस ऑफ कम्युनिकेशन' में एक अध्याय जोड़ा होता। वैश्विक इतिहास के अपने अध्ययन से वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि संस्कृति संचार के साधनों से निरूपित होती है। उनके दृष्टिकोण से देखा जाये तो डिजिटल प्लेटफॉर्म मानवीय भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति को केवल प्रसारित नहीं करते बल्कि सूक्ष्म आकार देते हैं जो समय आने पर वटवृक्ष होने की संभावनाएं रखता है। 'सोशल' मीडिया क्या वाकई सामाजिक ताने – बाने को समृद्ध कर रहा है? जिस विशाल पैमाने पर हानिकारक घृणा को बढ़ावा देने वाली सामग्री इस मीडिया में मथी जा रही है, उससे हो रही विष उत्पत्ति से निपट पाने में मानवता किंकर्त्तव्यविमूढ़ है। परिपक्व समझे जाने वाले लोग उन बेघर, लावारिस बच्चों की तरह व्यवहार कर रहे हैं जो गुजरते वाहनों पर पत्थर फेंकते हैं। हताशा, ख़ालीपन और अंधकार में डूबते –उतराते सोशल मीडिया को सुसंस्कृत मानवीयता का किनारा चाहिये।

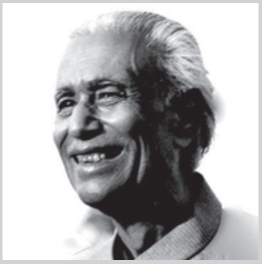
मरिया रैसा और फ्रांसेस हॉगन ने अपनी बात अलग–अलग समय में कही है कि यदि हमारी चेष्टायें लाभ–केंद्रित हैं, तो यह समाज, लोकतंत्र और बच्चों के भविष्य के लिए कतई अच्छा नहीं हो सकता है। क्या हमारे पास असहमत होने की गुंजाइश है?

यह कॉलम पहली बार प्रिंट संस्करण में १३ अक्टूबर, २०२१ को 'बिग टेक एंड अवर किड्स' शीर्षक से छपा था। लेखक श्री कृष्ण कुमार एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं। उनकी नवीनतम पुस्तक है 'स्मॉलर सिटिज़न्स'। ❑

अनुवाद–
अपर्णा मक्कड़
जयपुर




राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में आनन्दशाला के बच्चे



धर्मवीर भारती

❑

श्री धर्मवीर भारती कवि थे। हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार। मानवीय सरोकारों से ओत–प्रोत थे। उन दिनों, लगभग ६० बरस पहले उनके लेखों की एक पुस्तक प्रकाश में आई थी 'मानव मूल्य और साहित्य'। वे एक सृजन–धर्मी पत्रकार भी थे। साप्ताहिक 'धर्मयुग' को उन्होंने जो ऊंचाई दी थी वह आज इतिहास बन गयी है। उनके एक खंड काव्य 'कनुप्रिया' को लाखों पाठकों ने गले लगाकर पढ़ा है और भी कई किताबें–सात गीत वर्ष, अंधायुग और ठेले पर हिमालय आदि। प्रस्तुत है उनका एक लेख। ❑सं.

संस्कार !

❑

दूसरे धर्म के प्रति गहरा निश्छल आदर और जात–पांत, संप्रदाय से ऊपर उठकर पूरी भारतीय जाति को अपना समझने वाले रज्जाक और रामभरोसे के चेहरे मेरे जेहन में गहरे दर्ज हैं, क्योंकि हिन्दी पट्टी का, हम हिन्दी भाषियों का यही असली चेहरा है। आज जब साम्प्रदायिक तनाव की खबरें पढ़ता हूं, तो बड़ी शिद्दत से याद आते हैं ये दोनों चेहरे। उदास होकर सोचता हूं कि कहां खोता जा रहा है हमारा असली चेहरा ? ये नफरत के मुखौटे किसने लगा दिये हमारे चेहरे पर ? किसने हमारे होठों पर चिपका दिये हैं ये ललकार भरे नारे ? नहीं दोस्तो, यह जहर हमारी हिन्दी पट्टी का नहीं है। यह तो कोई साजिश कर रहा है। चुपचाप। हमारा तो असली चेहरा वही है, जिसका असली धर्म प्यार है, निश्छल प्यार, उदारता, दिली–भाईचारा।

और यह चेहरा आज का नहीं है, इस चेहरे के पीछे हिन्दी पट्टी का पिछले चार सौ वर्षों का शानदार इतिहास है। इन चेहरों के पीछे **अवध के कला–रसिक वीर नवाब वाजिद अली शाह** का चेहरा है, जिन्होंने वृंदावन में भगवान कृष्ण के वसंत श्रृंगार के लिए लाखों की न्योछावर भेजी थी और आज तक जिनके नाम से वसंती कमरा मंदिर में सुरक्षित है। इसके पीछे **नवाब** के विश्वस्त **हिन्दू खजांची ललित किशोर शाह** का चेहरा है, जो करोड़ों का खजाना त्याग कर वृंदावन में फकीर होकर रहे, पर अंग्रेज की अदालत में जाकर नवाब के खिलाफ गवाही देना कबूल नहीं किया। इस चेहरे के पीछे **अब्दुर्रहीम खानखाना** का चेहरा है, जो दिल्ली दरबार से प्रताड़ित होकर जब चित्रकूट पहुंचे, तब राम वनवास को याद कर लिखा:

चित्रकूट में रमि रहे
रहिमन अवध नरेस
जापर विपदा परत है
सो आवत यही देस।

इसके पीछे मालवा की **महारानी अहिल्याबाई** का चेहरा है, जो पेशवाओं के उत्पीड़न से बचने के लिए हजारों मुस्लिम जुलाहों के परिवारों को **माहेश्वर** लायीं, उनके लिए मस्जिदें बनवायीं, उनकी बुनी साड़ियों के लिए बाजार खुलवाये, उनकी बेटियों की शादियां करवायीं। इसके पीछे बुंदेलखंड की **महारानी लक्ष्मीबाई** का चेहरा है, जिन्होंने अपने तोपजी **पठान गौस खान** को अपने बेटे से बढ़कर माना।

इस परंपरा के पीछे इस प्रदेश के महाकवियों की वाणी है। इस प्रदेश के सूफियों, संतों और फकीरों ने बार-बार कहा कि राम और रहीम के बंदों में कोई फर्क नहीं, वे मन-प्राण से एक हैं और संतों, सूफियों के साथ गुरुओं ने यही उपदेश दिया। गुरु गोविन्द सिंह ने स्पष्ट कहा-**मानस की जात सबै एकै पहिचानिबो।** यह ऐतिहासिक तथ्य है कि सदियों की इस अध्यात्म समृद्ध मानव प्रेमी परंपरा ने विरासत में हिन्दी प्रदेश को एक गहरी उदारवादी मानसिकता दी, जो सत्य के प्रति एकनिष्ठ थी, जाति और धर्म के नाम पर पनपने वाली क्षुद्र संकीर्णताओं से मुक्त होने की कोशिश करती थी व्यावहारिक जीवन में। रैदास, कबीर, दादू की बानी से सुपरिचित गरीब-से-गरीब किसान-दस्तकार भी सब में एक आत्मा को पहचानने और मानवीय मर्यादाओं का पालन करने की क्षमता रखते थे।

यदि शिक्षा का काम संस्कार देना है, तो मुझे यह कहने में संकोच नहीं कि इन चार सौ वर्षों की परंपरा ने उन्हें सच्चे अर्थों में सुशिक्षित और संस्कारवान बनाया है। हिन्दी प्रदेश के चरित्र का यह आयाम अपने आप में अनूठा और सारे भारत में अद्वितीय था। अंग्रेजी शिक्षा और संस्कारों से समाज की जो ऊपरी सतह प्रभावित होकर पश्चिम के छद्म तर्कवाद और कैरियरपरस्ती की ओर दौड़ पड़ी थी, वह चाहे विपथगामी होने लगी हो, पर जन-सामान्य में यह गहरी मूल्य चेतना,मर्यादा-बुद्धि और सर्व-धर्म-समभाव और मानव प्रेम की परंपरा अक्षुण्ण थी। ❑



संपूर्ण क्रांति अब नारा है,
भावी इतिहास हमारा है।

१९७० के दशक में देश में कुछ में कुछ ऐसी परिस्थितियां बन गयी थीं कि श्री जयप्रकाश नारायण को फिर से बापू से मिले सत्याग्रह के ताबीज का सहारा लेकर एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन छेड़ना पड़ा। संपूर्ण-क्रांति का आंदोलन। इस आंदोलन में लाखों लोग और कई राजनैतिक पार्टियों के मूर्धन्य नेता जयप्रकाश जी के साथ जुड़ गये थे। यह आंदोलन आजादी की जोत जलते रखने का आंदोलन था। सच्चे अर्थों में जन-आंदोलन। इस आंदोलन में जे.पी. घायल हो गये थे। तभी धर्मवीर भारती की कलम से बह निकली थी यह कविता मुनादी। पढिये अगले पृष्ठ पर। ❑

मुनादी

❑

ख़ल्क ख़ुदा का,
मुलुक बाश्शा का
हुकुम शहर कोतवाल का...
हर खासो-आम को आगह किया जाता है
कि खबरदार रहें
और अपने-अपने किवाड़ों को अन्दर से
कुंडी चढाक़र बन्द कर लें
गिरा लें खिड़कियों के परदे
और बच्चों को बाहर सड़क पर न भेजें
क्योंकि
एक बहत्तर बरस का बूढ़ा आदमी अपनी काँपती
कमजोर आवाज में
सड़कों पर सच बोलता हुआ निकल पड़ा है !

शहर का हर बशर वाक़िफ़ है
कि पच्चीस साल से मुजिर है यह
कि हालात को हालात की तरह बयान किया जाए
कि चोर को चोर और हत्यारे को हत्यारा कहा जाए
कि मार खाते भले आदमी को
और असमत लुटती औरत को
और भूख से पेट दबाये ढाँचे को
और जीप के नीचे कुचलते बच्चे को
बचाने की बेअदबी की जाय !

जीप अगर बाश्शा की है तो
उसे बच्चे के पेट पर से गुजरने का हक क्यों नहीं ?
आखिर सड़क भी तो बाश्शा ने बनवायी है !
बुड्ढे के पीछे दौड़ पड़ने वाले
अहसान फरामोशों ! क्या तुम भूल गये कि बाश्शा ने
एक खूबसूरत माहौल दिया है
जहाँ भूख से ही सही, दिन में तुम्हें तारे नजर आते हैं
और फुटपाथों पर फरिश्तों के पंख
रात भर तुम पर छाँह किये रहते हैं
और हूरें हर लैम्पपोस्ट के नीचे खड़ी
मोटर वालों की ओर लपकती हैं
कि जन्नत-तारी हो गयी है जमीं पर;
तुम्हें इस बुड्ढे के पीछे दौड़कर
भला और क्या हासिल होने वाला है ?

आखिर क्या दुश्मनी है तुम्हारी उन लोगों से
जो भलेमानुसों की तरह अपनी कुरसी पर चुपचाप
बैठे-बैठे मुल्क की भलाई के लिए
रात-रात जागते हैं;
और गाँव की नाली की मरम्मत के लिए
मास्को, न्यूयार्क, टोकियो, लन्दन की खाक
छानते फकीरों की तरह भटकते रहते हैं...
तोड़ दिये जाएँगे पैर
और फोड़ दी जाएँगी आँखें
अगर तुमने अपने पाँव चल कर
महल-सरा की चहारदीवारी फलाँग कर
अन्दर झाँकने की कोशिश की !

क्या तुमने नहीं देखी वह लाठी
जिससे हमारे एक कद्दावर जवान ने
इस निहत्थे काँपते बुड्ढे को ढेर कर दिया ?
वह लाठी हमने समय-मंजूषा के साथ
गहराइयों में गाड़ दी है
कि आने वाली नस्लें उसे देखें और
हमारी जवाँमर्दी की दाद दें

अब पूछो कहाँ है वह सच जो
इस बुड्ढे ने सड़कों पर बकना शुरू किया था ?
हमने अपने रेडियो के स्वर ऊँचे करा दिये हैं
और कहा है कि जोर-जोर से फिल्मी गीत बजायें
ताकि थिरकती धुनों की दिलकश बलन्दी में
इस बुड्ढे की बकवास दब जाए !

नासमझ बच्चों ने पटक दिये पोथियाँ और बस्ते
फेंक दी है खड़िया और स्लेट
इस नामाकूल जादूगर के पीछे चूहों की तरह

फद्दर-फद्दर भागते चले आ रहे हैं
और जिसका बच्चा परसों मारा गया
वह औरत आँचल परचम की तरह लहराती हुई
सड़क पर निकल आयी है।

ख़बरदार यह सारा मुल्क तुम्हारा है
पर जहाँ हो वहीं रहो
यह बगावत नहीं बर्दाश्त की जाएगी कि
तुम फासले तय करो और
मंजिल तक पहुँचो

इस बार रेलों के चक्के हम खुद जाम कर देंगे
नावें मँझधार में रोक दी जाएँगी
बैलगाड़ियाँ सड़क-किनारे नीमतले खड़ी कर दी जाएँगी
ट्रकों को नुक्कड़ से लौटा दिया जाएगा
सब अपनी-अपनी जगह ठप !
क्योंकि याद रखो कि मुल्क को आगे बढ़ना है
और उसके लिए जरूरी है कि जो जहाँ है
वहीं ठप कर दिया जाए !

बेताब मत हो
तुम्हें जलसा-जुलूस, हल्ला-गूल्ला, भीड़-भड़क्के का शौक है
बाश्शा को हमदर्दी है अपनी रियाया से
तुम्हारे इस शौक को पूरा करने के लिए
बाश्शा के खास हुक्म से
उसका अपना दरबार जुलूस की शक्ल में निकलेगा
दर्शन करो !
वही रेलगाड़ियाँ तुम्हें मुफ्त लाद कर लाएँगी
बैलगाड़ी वालों को दोहरी बख्शीश मिलेगी
ट्रकों को झण्डियों से सजाया जाएगा
नुक्कड़ नुक्कड़ पर प्याऊ बैठाया जाएगा
और जो पानी माँगेगा उसे इत्र-बसा शर्बत पेश किया
जाएगा
लाखों की तादाद में शामिल हो उस जुलूस में
और सड़क पर पैर घिसते हुए चलो
ताकि वह खून जो इस बुड्ढे की वजह से
बहा, वह पुँछ जाए !

बाश्शा सलामत को खूनखराबा पसन्द नहीं !❑

*तानाशाही का असली रूप सामने आते देर नहीं लगी। ४ नवम्बर १९७४ को ही हुआ वह भयानक हादसा। **जे.पी.**ने पटना में भ्रष्टाचार के खिलाफ रैली बुलायी। हर उपाय पर भी लाखों लोग सरकारी शिकंजा तोड़ कर आये। उन निहत्थों पर निर्मम लाठी-चार्ज का आदेश दिया गया। अखबारों में धक्का खा कर नीचे गिरे हुए बूढ़े **जे.पी.**उन पर तनी पुलिस की लाठी, बेहोश **जे.पी.**और फिर घायल सिर पर तौलिया डाले लड़खड़ा कर चलते हुए **जे.पी.**। दो-तीन दिन भयंकर बेचैनी रही, बेहद गुस्सा और दुख...९ नवम्बर रात १० बजे यह कविता अनायास फूट पड़ी ❑ धर्मवीर भारती*



मनीष शर्मा

❑

आज साक्षरता की सुध लेने वाला कोई नहीं रहा। मगर, चाहत हर आदमी के मन में है कि साक्षरता होनी चाहिए। कर कोई नहीं रहा है, मगर फिर भी होनी चाहिए। और अगर होनी चाहिए तो फिर यह बताना भी जरूरी है कि कितनी हो गई है। ऐसा बताने के लिए मूल्यांकन भी किये जाने चाहिए। परिक्षा भी ली जानी चाहिए और बिना कोई काम किये यह पता भी लगा लेना चाहिए कि समाज आज कहां खड़ा है, कौन कितना साक्षर है और कितना निरक्षर है। अखबार में छपी एक रपट के आधार पर हम इतने सारे प्रश्न कर रहे हैं। आगे तो अल्लामियां मालिक है। ❑सं.

साक्षरता दिवस विसंगति और विडंबना !

❑

सत्तर के दशक में भारत की आधी से ज्यादा आबादी निरक्षर थी। निरक्षरता का दाग मिट सके, इसके लिए भारत सरकार ने वर्ष १९७८ में राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम शुरू किया। बाद में राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम (एनएईपी) बदल कर साक्षरता कार्यक्रम हो गया और फिर राष्ट्रीय साक्षरता मिशन कार्यक्रम चलाया गया। दशकों तक चले इन सघन साक्षरता कार्यक्रमों की वजह से ही २०११ में भारत की साक्षरता दर तिहत्तर प्रतिशत हो गयी।

किन्तु वर्ष २०११ में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को बंद कर राष्ट्रीय मिशन के अंतर्गत साक्षर भारत कार्यक्रम चलाया गया। इसके तहत हर ग्राम पंचायत स्तर पर लोक शिक्षा केंद्र की स्थापना हुई । हर केंद्र पर एक महिला और एक पुरुष प्रेरक की नियुक्ति भी की गयी । इसी केंद्र पर महात्मा गांधी वाचनालय एवं पुस्तकालय भी संचालित किये जाते थे। प्रेरकों को मानदेय के रूप में २००० रुपये भारत सरकार और ५०० रुपये प्रतिमाह राज्य सरकार द्वारा दिया जाता था । इस योजना में प्रेरकों के सहयोग एवं निरक्षरों को पढ़ाने के लिए स्वयं सेवकों को भी शामिल किया गया था। हालांकि उन्हें किसी प्रकार का मानदेय नहीं दिया जाता था । प्रेरकों द्वारा नियमित रूप से कक्षाएं संचालित होती थीं । उनका भी समय-समय पर प्रशिक्षण होता था ।

वर्ष २०१८ में साक्षर भारत कार्यक्रम भी बंद कर दिया गया । प्रेरक हटा दिये गये। दो साल तक साक्षरता का कोई कार्यक्रम भी नहीं चला। वर्ष २०२० में सरकार द्वारा एक वर्ष के लिए पढ़ना-लिखना कार्यक्रम की शुरुआत हुई । इसके तहत हर स्वयं सेवक को दस निरक्षरों को साक्षर बनाने की जिम्मेदारी दी गयी। हर स्कूल से एक शिक्षक को ग्राम पंचायत साक्षरता प्रभारी बनाया गया और शिक्षा विभाग के पंचायत प्राथमिक शिक्षा अधिकारी को साक्षरता प्रभारी ।

विडंबना है कि वर्ष २०११ की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार जिस राज्य में लगभग ५०% महिलाएं और २०% पुरुष साक्षर हों (जिनमें पिछड़े जिलों के हालात तो और भी बुरे हैं) वहां पर साक्षरता के कार्यक्रम को बंद कर दिया गया।

केन्द्र सरकार ने भी साक्षरता कार्यक्रम को गति देने के लिए कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने और

उनके लिए गुणवत्तापूर्ण पठन-पाठन सामग्री बनाने के काम में लगी महत्वपूर्ण संस्था राज्य संदर्भ केन्द्र को भी बंद कर दिया गया। बंद किये गये संदर्भ केन्द्र पूरे देश में चल रहे थे।

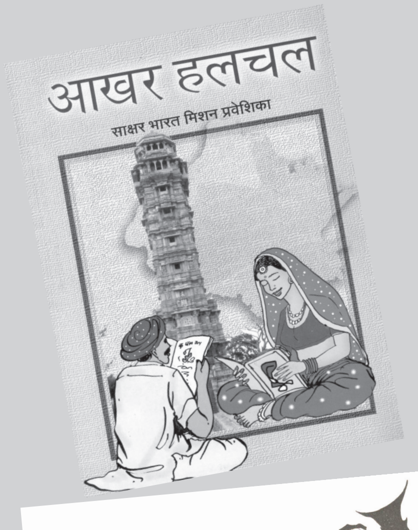
हालात ये हैं कि २०१८ में प्रेरकों को हटाने के बाद साक्षरता के लिए न तो नियमित कक्षाएं हुई और न ही स्वयं सेवकों का किसी प्रकार का शिक्षण-प्रशिक्षण हुआ । साक्षरता का काम अब सरकारी शिक्षकों के हवाले है जो पहले से ही अपने कामों के बोझ तले दबे हैं। अब यह कार्यक्रम महज खानापूर्ति बन गया है। सरकार का पढ़ना-लिखना कार्यक्रम केवल मूल्यांकन परीक्षा में निरक्षरों को बिठा देने तक सीमित हो गया है।

जुलाई २०२१ में जयपुर जिले में आयोजित साक्षरता मूल्यांकन परीक्षा में २५,००० लोग बैठे। जबकि लक्ष्य था बीस हजार लोगों को इस मूल्यांकन परीक्षा में शामिल कराने का। जबकि पूरे वर्ष कभी साक्षरता की कोई कक्षा नहीं चली तो मूल्यांकन परीक्षा में बैठने वाले ये लोग कौन थे? यह जांच का विषय है। सवाल उठता है कि बिना संसाधनों के क्या इतने लोगों को साक्षर बनाने का प्रयास हुआ है?

निरक्षरों को पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए तैयार की गयी प्रवेशिका कितनी कारगर रही है? यह भी देखने वाली बात है। क्या उसका कोई फील्ड टेस्ट हुआ था? उसको बनाने में कौन लोग शामिल थे? क्या इसके लिए साक्षरता विशेषज्ञों की राय ली गयी थी?

जबकि जानकारों को लगता है कि जब तक सरकार पहले की तरह प्रेरकों की नियुक्ति नहीं करती (चाहे वह अल्प मानदेय पर ही क्यों न हो), पंचायत वार साक्षरता केंद्र शुरू नहीं करती और नियमित कक्षाएं नहीं लगाती, तब तक साक्षरता में गुणात्मक सुधार की संभावना नहीं है। बिना इसके नवभारत साक्षरता कार्यक्रम के तहत वर्ष २०३० तक शत-प्रतिशत साक्षरता के लक्ष्य को पाना दूर की कौड़ी लगता है।❑

५७, महावीर नगर, सांघी मार्ग,
सोनी सेन्टर के पीछे, जयपुर



भूल गये सब इन प्रवेशिकाओं को...







क्या मोबाईल में मौजूद है सारी शिक्षा ?

❑

मेहुल,

तुम पढ़ो मत। बैठे रहो बंद कमरे में। कक्षा तुम्हारे घर तक चली आयेगी। पढ़ो मत मेहुल, किताब भी मत पढ़ो। अक्षर भी मत सुधारो। गणित के सवालों को हल करने का अभ्यास भी मत करो। सब कुछ तुम्हारे मोबाईल में आकाश मार्ग से उतर कर आ जायेगा। इसी रास्ते आने वाली सारी सूचनाएं अथवा शिक्षा आभासी शिक्षा कहलाती है। आभास तो होता है, मगर सचमुच कुछ नहीं होता है। छोटे से खिलौने के पर्दे पर जो कुछ उतरता है वह कैसे तुम्हें याद होगा और कैसे तुम्हारे गले उतरेगा और कैसे तुम्हारी रग-रग का हिस्सा बन जायेगा।

मेहुल,शिक्षा की तो अपनी एक लय होती है, एक धुन होती है और एक सरस संगीत होता है। ऐसा गीत जिसे तुम गुनगुना सकते हो, लय में याद कर सकते हो। उसके साथ ताल में ताल मिलाकर पुनः दोहरा सकते हो। तभी तो जो सीखा है वह हमारे गले उतरेगा और हमारी रग-रग में रम जायेगा। हां, मेहुल, शिक्षा को रग रग में रमाना जरूरी है तभी वह हमारे व्यवहार का हिस्सा बनेगी। हमको मूक दर्शक नहीं बनायेगी। हमको सवाल करना सिखायेगी। हमको जोर से कुछ पूछने और अपना हक मांगने का हौसला देगी। जानने का हक हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। मगर, मोबाईल में जो कुछ उतर रहा है उसे दूसरा भी दूर बैठा कोई तंत्र जान रहा है और उस रास्ते से वह तुमको भी पहचान रहा है। यह बहुत बड़ा छल-छद्म है जिसे न तुम समझ रहे हो और न तुम्हारी स्कूल समझ रही है। जानती जरूर है स्कूल कि दूर कोई **पैगासस** बैठा है अथवा कोई जासूसी का **तांत्रिक तार** बिछा हुआ है, मगर सच यही है आज के जमाने का कि ऊपर वाला जान कर अनजान है। यह फिल्मी गाने की पंक्ति जरूर है, मगर इसका चमत्कार यह है कि वक्त पर याद आ जाती है। शिक्षा का सच भी यही है मेहुल कि वह वक्त बेवक्त काम आ जाये, याद आ जाये। मगर ऐसा होगा तभी जब शिक्षा सरस बनेगी, मधुर बनेगी और गुनगुनाने या गाने की कौशल हमको दे देगी। नये जमाने की दुर्घटना ही यह है कि यहां सब कुछ बेसुरा है। सुर में कुछ भी नहीं है। न दुनिया, न देश, न जमाना, न हम। बेसुरे समाज में रहने वाले हम सब लोग असुर हो गये हैं अर्थात् राक्षस हो गये हैं। जो सुर में रहता है वह देवता है। अर्थ बहुत सरल है कि जो सुर में रहता है वही गा सकता है और गाने वाला ही देवता होता है। क्योंकि वह गा कर दे रहा होता है। सुना रहा होता है। किसी का मनोरंजन करके दुख दूर कर रहा होता है। शिक्षा दूसरे का दुख दूर करने का ही एक साधन है मेहुल। क्या मोबाईल पर चल रही तुम्हारी क्लास तुम्हें इतना सब दे रही है? मेरी यह चिट्ठी ले जाकर अपनी टीचर से पूछो। देखो कि कोई उत्तर मिलता है क्या ? अगर तुम्हारी टीचर को मेरी बात अच्छी न लगे तो उनसे मेरी तरफ से क्षमा मांग लेना। कहना, टीचर जी नाना को माफ करो। ❑ **रमेश थानवी**



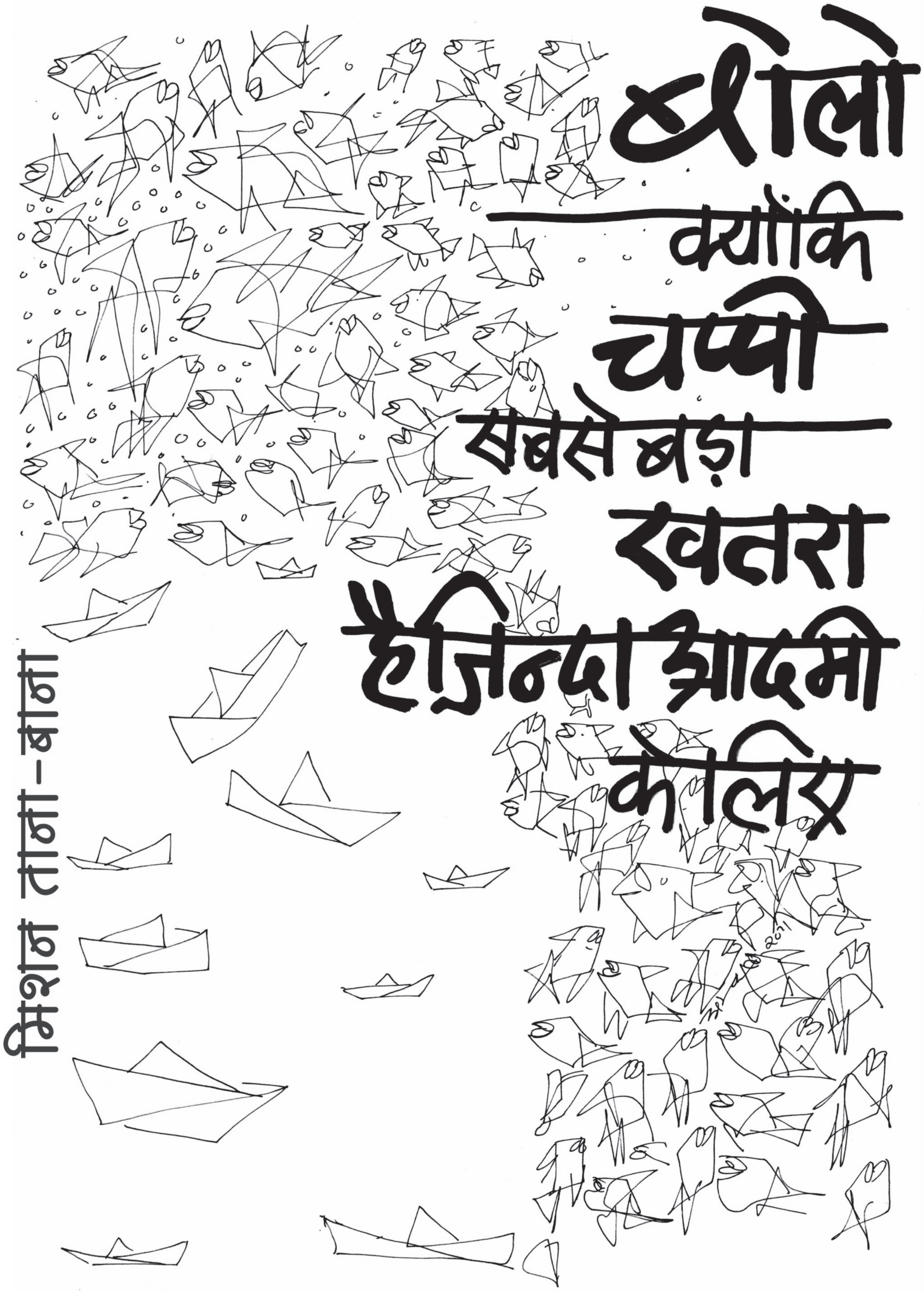
उदयपुर से सदाशिव श्रोत्रिय

अनौपचारिका का नया अंक पाकर मन खुशी से भर गया। इसके कवर पेज का रंग ही इतना मनोहारी है कि उसमें से एक उत्सव-भाव निरंतर छलकता दिखाई देता है। फिर जिस 'आनंद-शाला' के चित्रात्मक वर्णन के लिए आपने उसका उपयोग किया है, पत्रिका के अंतिम पृष्ठों पर उसके बारे में पढ़ कर मन और भी बाग-बाग हो गया। बच्चों की संपूर्ण मुक्ति की ऐसी दलील आप जैसा मनीषी ही दे सकता है जो तमाम विषम और विपरीत स्थितियों के बावजूद मनुष्यता में अपना विश्वास खोने और अपनी हार मानने के लिए तैयार न हो। आपके विचारों को बल देने के लिए आपको सुधेन्दु पटेल, अविजित पाठक, वागीश कुमार झा, प्रेरणा-विश्वजीत, प्रभा पारीक और सूर्य प्रकाश जीनगर जैसे विचारकों-लेखकों का साथ भी मिल ही जाता है। डायरी लेखन से शिक्षा का आपका विचार भी अत्यंत मौलिक और अनंद संभावनाओं से पूर्ण है। गिजूभाई जैसे अवतारों की कृपा-दृष्टि भी आप पर निरंतर बनी रहती है।

ऐसे अनूठे अंक के प्रकाशन के लिए आप मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें। मेरी मान्यता है कि यह अंक कई सही सोच वालों के लिए प्रेरणा का काम करेगा। ❑

स्वत्त्वाधिकारी राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति द्वारा कुमार एंड कम्पनी, जयपुर में मुद्रित तथा ७-ए, झालाना संस्थान क्षेत्र, जयपुर-३०२००४ से प्रकाशित। संपादक - रमेश थानवी

अनौचारिका : पृष्ठ–२८ नवम्बर, २०२१ रजिस्ट्रार ऑव न्यूज पेपर, नई दिल्ली के द्वारा पंजीकृत मासिक पत्रिका RNI 43602/77 ISSN No. 2581-981X



चित्र : विनय अंबर

पोस्टर : राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति, जयपुर